ब्राह्मण जन्म की दिव्यता और अलौकिकता

सुनना और समाना। सुनना सहज लगता है, रूचि होती है सुनते ही रहें। यह इच्छा सदैव रहती है। ऐसे ही समाना भी इतना ही सहज अनुभव होता है। सदा इच्छा रहती है कि समाने से बाप समान बनना है। समाने का स्वरूप है बाप समान बनना। तो अभी तक फर्स्ट स्टेज पर हो, सेकेण्ड स्टेज पर हो वा लास्ट स्टेज तक हो? लास्ट स्टेज है सुनना और बनना। सुन रहे हैं, बन ही जायेंगे, बनना ही है। कल्प पहले भी बने थे, अब भी अवश्य बनेंगे, यह बोल लास्ट स्टेज में समाप्त हो जाते हैं। एक-एक बोल जैसे-जैसे सुनते जा रहे हैं, वैसे-वैसे बनते जा रहे हैं। लास्ट स्टेज वालों का लक्ष्य और बोल स्वरूप द्वारा स्पष्ट दिखाई देगा। जैसे पहला पाठ आत्मा का सुनते हो और सुनाते हो। लास्ट स्टेज वाली आत्मा सिर्फ शब्द सुनेंगी, सुनायेगी नहीं लेकिन साथ-साथ स्वरूप में स्थित होगी। इसको कहते हैं बाप समान बनना। स्वयं का वा बाप का स्वरूप व गुण वा कर्तव्य सिर्फ सुनायेंगे नहीं, लेकिन हर गुण और कर्तव्य अपने स्वरूप द्वारा अनुभव करायेंगे। जैसे बाप अनुभवी मूर्त है, सिर्फ सुनाने वाले नहीं हैं। तो ऐसे फॉलो फादर करना है। जैसे साकार में बाप को देखा, सुनाने के साथ कर्म में, स्वरूप में करके दिखाया। सुनना, सुनाना और स्वरूप बन दिखाना – तीनों ही साथ-साथ चला। ऐसे सुनना और सुनाना और दिखाना साथ-साथ है? अभी तक जितना सुना है उतना ही समाया है। विश्व के आगे कर दिखलाया है! महान् अन्तर है वा थोड़ा सा अन्तर है? रिजल्ट क्या है? सुनना और सुनाना तो कामन बात है। ब्राह्मणों की अलौकिकता कहाँ तक दिखाई देती है। जैसे बाप के महावाक्य हैं कि 'मेरा जन्म और कर्म प्राकृत मनुष्यों सदृश्य नहीं, लेकिन दिव्य और अलौकिक है।' बापदादा के साथ-साथ आप ब्राह्मणों का जन्म भी साधारण नहीं, दिव्य और अलौकिक है। जैसा जन्म, जैसा दिव्य नाम वैसा ही दिव्य अलौकिक काम है।

जैसे हरेक लौकिक कुल की मर्यादा की भी लकीर होती है। ऐसे ब्राह्मण कुल की मर्यादाओं की लकीर के अन्दर रहते हैं! मर्यादाओं की लकीर, संकल्प में भी किसी आकर्षण वश उल्लंघन तो नहीं करते हैं अर्थात् लकीर से बाहर तो नहीं जाते हैं। शूद्रपन के स्वभाव वा संस्कार की स्मृति आना अर्थात् अछूत बनना अर्थात् ब्राह्मण परिवार से अपने आप ही अपने को किनारे करना। तो यह चैक करो कि सारे दिन में बाप का सहारा कितना समय रहा और अपने आप किनारा कितना समय किया। बार-बार किनारा करने वाले बाप के सहारे का अनुभव, बाप के साथ-साथ रहने का अनुभव, बाप द्वारा प्राप्त हुए सर्व खजानों का अनुभव चाहते हुए भी नहीं कर पाते हैं। सागर के किनारे पर रहते सिर्फ देखते ही रह जाते हैं, पा नहीं सकते। पाना है, यह इच्छा बनी रहती है लेकिन पा लिया है, यह अनुभव नहीं कर पाते हैं। जिज्ञासु ही रह जाते हैं, अधिकारी नहीं बन पाते हैं। तो सारे दिन में जिज्ञासु की स्टेज कितना समय रहती है और अधिकारी की स्टेज कितना समय रहती है? आप लोगों के पास भी जब कोई नया आता है तो उसको पहले जिज्ञासु बनाते हो। जिज्ञासु अर्थात् जिज्ञासा रहे कि पाना है। आप लोग भी जिज्ञासु को किनारे रखते हो। संगठन में या रेगुलर क्लास में आने नहीं देते हो। जब वह कहता है कि अब अनुभव हुआ, निश्चय हुआ वा मान लिया, जान लिया, तब संगठन में आने की परमीशन देते हो। तो अपने आप से पूछो जब जिज्ञासु की स्टेज रहती है तो बाप का सहारा वा कुल का सहारा अर्थात् संगठन का सहारा स्वत: ही समीप के बजाए, अपने को दूर-दूर वाला अनुभव नहीं करते? सहारे के बजाये स्वत: बुद्धि द्वारा किनारा नहीं हो जाता? बच्चे के बजाए मांगने वाले भक्त नहीं बन जाते? शक्ति दो, मदद करो, माया को भगाओ, युक्ति दो, माया से छुड़ाओ, यह ब्राह्मणपन के संस्कार नहीं हैं। ब्राह्मण कब पुकारते नहीं। ब्राह्मणों को स्वयं बाप भिन्न-भिन्न श्रेष्ठ टाईटल से पुकारते हैं। जानते हो ना? आपके कितने टाईटल हैं? ब्राह्मण अर्थात् पुकारना बन्द, ब्राह्मण अर्थात् सिरताज। कभी भी प्रकृति के वा माया के मोहताज नहीं। तो ऐसे सिरताज बने हो? माया आ जाती है अर्थात् मोहताज बनना। पुराने संस्कार वश हो जाते हैं, स्वभाव वश हो जाते हैं, यह है मोहताज पन। ऐसा मोहताज बाप के सिरताज नहीं बन सकता। विश्व के राज्य के ताजधारी नहीं बन सकता, बाप के सिरताज बनने वाले स्वप्न में भी मोहताज नहीं बन सकते। समझा, रियलाइज करो। अब सेल्फ रियलाईजेशन कोर्स चल रहा है ना। अच्छा।

सदा अपने ब्राह्मण कुल की मर्यादा के लकीर के अन्दर रहने वाले, मर्यादा पुरुषोत्तम, सुनने, सुनाने और समान बनने वाले, अभी-अभी स्वरूप से दिखाने वाले, सदा सिरताज सदा बाप के सर्व प्राप्तियों के सहारे में रहने वाले श्रेष्ठ आत्माओं को बापदादा का याद, प्यार और नमस्ते।

दीदी जी से

जाना और आना कहेंगे? जाना और आना तब कहें जब साथ छोड़ कर जायें। कहाँ से भी जाना होता है, जाना अर्थात् कुछ छोड़कर जाना। लेकिन यहाँ जाना और आना शब्द कह सकते हैं? यहाँ हैं तो भी साथ हैं, वहाँ हैं तो भी साथ हैं। जो सदा साथ रहता, स्थान में भी और स्थिति में भी, तो उसके लिए जाना नहीं कहेंगे। जैसे मधुबन में भी एक कमरे से दूसरे कमरे में जाओ तो यह नहीं कहेंगे हम जा रहे हैं, छुट्टी लेवें, नहीं। नैचुरल जाना आना चलता रहता है, क्योंकि साथ-साथ हैं ना। यह भी एक कमरे से दूसरे कमरे में चक्कर लगाते हैं। हैं मधुबन वासी इसलिए विदाई शब्द भी नहीं कहते। सदा सेवा की बधाई देते हैं। सदा साथ रहते, सदा साथ चलते, अंग-संग हैं। ऐसे ही अनुभव होता है ना। महारथी अर्थात् बाप समान। महारथियों के हर कदम में पद्मों की कमाई तो कामन बात है, लेकिन हर कदम में अनेक आत्माओं को पद्मापति बनाने का वरदान भरा हुआ है। महारथी कहेंगे हम जाते हैं, नहीं लेकिन साथ जाते हैं। महारथियों की सर्विस नैनों द्वारा, बाप द्वारा प्राप्त हुए वरदान अनेकों को प्राप्त कराना अर्थात् अपने द्वारा बाप को प्रत्यक्ष करना है। आप को देखते-देखते बाप की स्मृति स्वत: आ जाए, हरेक के दिल से निकले कि कमाल है बनाने वाले की। तो बाप प्रत्यक्ष हो जायेगा। बाप आप द्वारा प्रत्यक्ष दिखाई देगा और आप गुप्त हो जायेंगे। अभी आप प्रत्यक्ष हो, बाप गुप्त है, फिर हरेक के दिल से बाप की प्रत्यक्षता के गुणगान करते हुए सुनेंगे। आप दिखाई नहीं देंगे, लेकिन जहाँ भी देखेंगे तो बाप दिखाई देगा। इसी कारण जहाँ भी देखें वहाँ बाप ही बाप है। यह संस्कार लास्ट में समा जाते हैं जो फिर भक्ति में जहाँ देखते वहाँ तू ही तू कह पुकारते हैं। लास्ट में आप सबके चेहरे दर्पण का कार्य करेंगे। जैसे आजकल मन्दिरों में ऐसे दर्पण रखते हैं जिसमें एक ही सूरत, अनेक रूपों में दिखाई देती है। ऐसे आप सबके चेहरे चारों ओर बाप को प्रत्यक्ष दिखाने के निमित्त बनेंगे। और भक्त कहेंगे जहाँ देखते तू ही तू। सारे कल्प के संस्कार तो यहाँ ही भरते हैं। तो भक्त इसी संस्कार से मुक्ति को प्राप्त करेंगे इसलिए द्वापर की आत्माओं में या मुक्ति पाने के संस्कार या तू ही तू के संस्कार ज्यादा इमर्ज रहते हैं तो अपने वा बाप के भक्त भी अभी ही निश्चित होते हैं। राजधानी भी अभी बनती तो भक्त भी अभी बनते। तो भक्तों को जगाने जाती हो वा बच्चों से मिलने के लिए जाती हो! चेक करना कि इस चक्कर में मेरे भक्त कितने बने और बाप के बच्चे कितने बने? दोनों का विशेष पार्ट है। भक्तों का भी आधाकल्प का पार्ट है और बच्चों का भी आधा कल्प का अधिकार है। भक्त भी अभी दिखाई देंगे या अन्त में? जो नौधा भक्ति करने वाले नम्बरवन भक्त माला के मणके होंगे, वह भी प्रत्यक्ष यहाँ ही होने हैं। विजय माला भी और भक्त माला भी क्योंकि संस्कार भरने का समय संगमयुग ही है। भक्त अन्त में पुकारते रह जायेंगे, हे भगवान हमें भी कुछ दे दो। यह संस्कार भी यहाँ से भरेंगे और बच्चे साथ का अनुभव करेंगे। अच्छा।

टीचर्स के साथ बापदादा की मुलाकात

योग्य शिक्षक का हर कर्म रूपी बीज फलदायक होगा, निष्फल नहीं

टीचर्स अर्थात् शिक्षक। शिक्षक का अर्थ क्या है? शिक्षक का यहाँ अर्थ है शिक्षा स्वरूप। बड़े से बड़ा शिक्षा देने का सहज साधन कौन-सा है? अनेक प्रकार के शिक्षा देने के साधन होते हैं ना। तो शिक्षा देने का सबसे सहज साधन कौन-सा है? स्वरूप द्वारा शिक्षा देना, मुख द्वारा नहीं। साकार बाप ने सबसे सहज साधन स्वरूप द्वारा ही शिक्षा दी ना। सिर्फ बोल से नहीं, कर्म से। कहेंगे वह सीखेंगे, नहीं। लेकिन जो करेंगे वह देख और भी करेंगे, यह मंत्र है। तो सबसे सहज तरीका, स्वरूप द्वारा शिक्षा देना। किसको कितना भी समझाओ तुम आत्मा हो, तुम शान्त स्वरूप, ज्ञान स्वरूप हो लेकिन वह समझेंगे तब तक नहीं, जब तक स्वयं उस स्वरूप में स्थित नहीं होंगे। ऐसे अनुभव की पढ़ाई इतनी अविनाशी हो जाती है। तो कैसे शिक्षा देती हो – वाणी से या स्वरूप से?

हर कदम द्वारा अनेक आत्माओं को शिक्षा देना – यह है योग्य टीचर, भाषण द्वारा व सप्ताह कोर्स द्वारा किसको शिक्षा स्वरूप बनाना। ऐसे शिक्षक के हर बोल, वाक्य नहीं लेकिन महावाक्य कहे जाते हैं क्योंकि हर बोल महान बनाने वाला है तो महावाक्य कहेंगे। हर कर्म अनेकों को श्रेष्ठ बनाने का फल निकालने वाला हो। कर्म को बीज कहा जाता है और रिजल्ट को कर्म का फल कहा जाता है। ऐसे शिक्षक का कर्म रूपी बीज फलदायक होगा। बीज अगर पावरफुल होता है तो फल भी इतना अच्छा निकलता है। हर कर्म रूपी बीज फलदायक होगा, निष्फल नहीं। इसको कहा जाता है योग्य शिक्षक। उनका हर संकल्प, जैसे ब्रह्मा के संकल्प के लिए गायन है कि ब्रह्मा के एक संकल्प ने नई सृष्टि रच ली। वैसे ऐसी शिक्षक के संकल्प नई सृष्टि के अधिकारी बनाने वाला। समझा। शिक्षक की परिभाषा यह है।

टीचर्स को एक लिफ्ट की गिफ्ट भी है। कौन-सी? टीचर्स बनना अर्थात् पुराने सम्बन्ध से त्याग करना। इस त्याग के भाग्य के लिफ्ट की गिफ्ट टीचर को है, पहले त्याग तो कर दिया ना। पहला त्याग है सम्बन्ध का। वो तो कर लिया। आगे भी त्याग की लिस्ट लम्बी है। लेकिन इस त्याग का, हिम्मत रखने का, सहयोगी बनने का संकल्प किया, यह लिफ्ट ही गिफ्ट बन जाती है। लेकिन सम्पूर्ण त्याग कर दो तो बाप के लिए गिफ्ट, दुनिया के लिए लिफ्ट बन जाओ। ऐसी लिफ्ट बन जाओ जो बैठा और पहुंचा। मेहनत नहीं करनी पड़े। टीचर्स को चान्स बहुत हैं लेकिन लेने वाला लेवे। टीचर्स बनने के भाग्य का तो सब गायन करते हुए इच्छा रखते हैं। इच्छा रखते हैं अर्थात् श्रेष्ठ भाग्य है ना। उसको सदा श्रेष्ठ रखना – वह है हरेक का नम्बरवार। टीचर्स जितना चाहे उतना अपना भविष्य सहज उज्जवल बना सकती हैं – लेकिन वह टीचर जो योग्य टीचर हो। थोड़े में खुश होने वाली टीचर तो नहीं हो ना। बापदादा तो टीचर्स को किस नज़र से देखते हैं? हमजिन्स की नज़र से क्योंकि बाप भी टीचर है ना। टीचर, टीचर को देखेंगे तो हमजिन्स की नज़र से देखेंगे। हमजिन्स को देख खुश होंगे। टीचर्स तो सदा सन्तुष्ट होंगी। पूछना अर्थात् हमजिन्स की इनसल्ट करना। अच्छा।

वरदान:- देह-अभिमान के त्याग द्वारा सदा स्वमान में स्थित रहने वाले सम्मानधारी भव

जो बच्चे इस एक जन्म में देह-अभिमान का त्याग कर स्वमान में स्थित रहते हैं, उन्हें इस त्याग के रिटर्न में भाग्यविधाता बाप द्वारा सारे कल्प के लिए सम्मानधारी बनने का भाग्य प्राप्त हो जाता है। आधाकल्प प्रजा द्वारा सम्मान प्राप्त होता है, आधाकल्प भक्तों द्वारा सम्मान प्राप्त करते हो और इस समय संगम पर तो स्वयं भगवान अपने स्वमानधारी बच्चों को सम्मान देते हैं। स्वमान और सम्मान दोनों का आपस में बहुत गहरा संबंध है।

स्लोगन:- हर कदम में बाप की, ब्राह्मण परिवार की दुआयें लेते रहो तो सदा आगे बढ़ते रहेंगे।

ओम शान्ति।